भारतीय कृषि: वर्तमान चुनौतियाँ एवं समाधान

अनुपमा सिंह[1]; डॉ मनोज कुमार सिंह[2]

[1]शोधार्थी, इतिहास विभाग, राजा हरपाल सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,जौनपुर

[2] असिस्टेंट प्रोफ़ेसर, इतिहास विभाग, राजा हरपाल सिंह स्नातकोत्तर महाविद्यालय, सिंगरामऊ, जौनपुर वीर बहादुर सिंह पूर्वांचल विश्वविद्यालय,जौनपुर

Corresponding Author Email: anupama.singh69@gmail.com

स्वातंत्र्योत्तर काल में भारत में कृषि क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन देखने को मिले हैं। आज़ादी के समय जहाँ भारत को "भोजन की गंभीर कमी वाले राष्ट्र" के रूप में देखा जाता था और उसे अपनी खाद्य आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए विदेशी सहायता पर निर्भर रहना पड़ता था, वहीं 1960 के दशक के दौरान हरित क्रांति ने देश को आत्म-निर्भर बनाने के साथ ही "खाद्य-अधिशेष राष्ट्र" का दर्ज़ा दिलाने में मदद की।

भारतीय अर्थव्यवस्था की वृद्धि और समग्र विकास में कृषि की भूमिका अत्यंत महत्त्वपूर्ण रही है। हालाँकि नित्य-प्रति बदलते परिवेश और आवश्यकताओं को देखते हुए इस भूमिका को पुनर्परिभाषित एवं क्रियान्वित किए जाने की आवश्यकता है जिससे कि 21वीं सदी की चुनौतियों का सामना और नए अवसरों का दोहन किया जा सके। कार्य-बल में वृद्धि एवं विनिर्माण क्षेत्र में अधिक रोज़गार सृजन न हो पाने की स्थिति में कृषि क्षेत्र का महत्त्व और भी बढ़ गया है। ऐसे में कृषि क्षेत्र में लाभकारी रोजगार के नए अवसर तलाशने की आवश्यकता है।

कृषि क्षेत्र में भारत की उपलब्धियाँ यद्यपि कुछ क्षेत्रों एवं राज्यों में प्रभावशाली होने के बावजूद भी क्षमता से कम रही हैं। हम आम तौर पर अपने समकालीन भोजन की स्थिति की तुलना 1960 के दशक के मध्य में भोजन की कमी की स्थिति से करते हैं और इस बात से संतुष्टि प्राप्त कर लेते हैं कि अब हमें भोजन की कमी का सामना नहीं करना पड़ रहा है। जबकि कृषि क्षेत्र की उपलब्धियों की तुलना चुनौतीपूर्ण मानदंडों के आधार पर भारत के अन्य क्षेत्रों जैसे अंतरिक्ष, सूचना प्रौद्योगिकी, दूरसंचार, सेवाओं एवं ऑटोमोबाइल, चिकित्सा विज्ञान, परिवहन आदि क्षेत्रों की उपलब्धियों से या अन्य राष्ट्रों की उपलब्धियों से की जानी चाहिए।

समावेशी विकास के अलावा कृषि क्षेत्र की भूमिका स्वास्थ्य और पोषण, देश के सतत विकास, जलवायु परिवर्तन के दुष्प्रभावों से निपटने एवं लोगों के जीवन-स्तर में सुधार में महत्त्वपूर्ण है। आज हम जब 21 वीं सदी की चुनौतियों से निपटने एवं उसके समाधान की बात करते हैं तो कृषि क्षेत्र में सुधार एवं बदलावों के एक नए दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

आज के समय में भारतीय कृषि के सामने सबसे बड़ी चुनौतियाँ निम्नवत हैं-

खाद्य एवं पोषण सुरक्षा- कुशल खाद्य अधिशेष प्रबंधन

रोज़गार सृजन के साथ कार्यकुशलता में वृद्धि

जलवायु परिवर्तन के साथ अनुकूलन- जल, ऊर्जा और भूमि जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों का सतत उपयोग

नीतिगत हस्तक्षेप, विनियम और सुधार

I. खाद्य एवं पोषण सुरक्षा: कुशल खाद्य-अधिशेष प्रबंधन

पोषण संकेतक (Nutrition Indicators) और बाल स्वास्थ्य संकेतक (Child Health Indicators) में भारत का स्थान काफ़ी नीचे आता है। FAO के एक अध्ययन के अनुसार सबसे अधिक संख्या में भूखे या अल्पपोषित लोग भारत में रहते हैं। International Food Policy Reasearch Institute (IFPRI) अपने वार्षिक प्रकाशन "Global Hunger Index" में भारत को साल दर साल बहुत नीचे दिखाता है। यह सब इस तथ्य के बावजूद कि भारत अपनी खाद्यान्न आवश्यकताओं की पूर्ति के साथ-साथ विदेशी बाज़ार में खाद्यान्नों का एक निर्यातक देश भी बन गया है।

अनाज की प्रति व्यक्ति उपलब्धता में वृद्धि के बावजूद प्रति व्यक्ति उपभोग में सबसे कम वृद्धि देखी गई है। लोगों का रुझान बागवानी और पशुधन उत्पादों की ओर बढ़ा है। यद्यपि खाद्य आपूर्ति में वृद्धि हुई है किंतु देश को कृषि नीति पर फिर से विचार करने की आवश्यकता होगी जोकि भारतीय कृषि जो चावल, गेहूं और चीनी के उत्पादन पर आवश्यकता से अधिक ज़ोर देती है।

भारत वर्तमान में 1.3 बिलियन लोगों की भोजन की मांग को पूरा करने के लिए लगभग 726 मिलियन टन खाद्यान्न का उत्पादन करता है । अगले 15 वर्षों में घरेलू मांग को पूरा करने के लिए 40 प्रतिशत अधिक भोजन की आवश्यकता होगी। इसमें 2.3 प्रतिशत वार्षिक वृद्धि शामिल है। यदि निर्यात बाजार में कृषि निर्यात की हिस्सेदारी वर्तमान 12 प्रतिशत के स्तर से बढ़ कर 20 प्रतिशत तक भी हो जाती है, तो कृषि उत्पादन में 2.64 प्रतिशत की वार्षिक वृद्धि दर आवश्यक होगी। 1965 से कृषि-खाद्य उत्पादन में 500 प्रतिशत की वृद्धि और हाल के 15 वर्षों में कृषि-खाद्य उत्पादन में 50 प्रतिशत से अधिक की वृद्धि को देखते हुए ऐसा लगता है कि भारत को अगले 15 वर्षों में भोजन की मांग को लेकर कोई गंभीर समस्या नहीं होगी।

1970-71 से देश में खाद्य उत्पादन में लगभग 3 प्रतिशत की दर से वृद्धि हुई है जबकि उसी अवधि में जनसंख्या वृद्धि लगभग 1.86 प्रतिशत रही है। इसके अलावा खाद्य उत्पादन में वृद्धि दर बनी हुई है जबकि हाल के वर्षों में जनसंख्या वृद्धि दर में गिरावट आई है। इस प्रकार प्रति व्यक्ति

खाद्यान्न उत्पादन में पर्याप्त वृद्धि हुई है। भारत के पास कई वर्षों से चावल और गेहूं का अतिरिक्त भंडार भी मौजूद है। हाल ही में चीनी का भारी अधिशेष भी जमा हो गया है।

1980 के दशक की शुरुआत में भारत में भोजन उत्पादन और खपत बहुत कम थी लगभग 1 किलो से थोड़ा अधिक प्रति व्यक्ति प्रति दिन । हाल के वर्षों में उत्पादन धीरे-धीरे बढ़ कर 1.73 कि.ग्रा. हुआ है जबकि घरेलू अवशोषण बढ़कर 1.59 किलोग्राम हो गया है (चित्र सं. -1)। इससे पता चलता है कि खाद्य अधिशेष में पिछले 35 वर्षों से लगातार वृद्धि हो रही है। इस स्थिति में खाद्य नीति में कमी प्रबंधन से अधिशेष प्रबंधन की ओर बदलाव की आवश्यकता है। किसी भी स्थिति में बढ़ते खाद्य-अधिशेष का निपटान करने के लिए भारत को विदेशों में बाज़ार की तलाश करनी होगी।

चित्र सं. -1: प्रति व्यक्ति खाद्यान्न उत्पादन एवं घरेलू खपत: 1980-83 से 2016-17

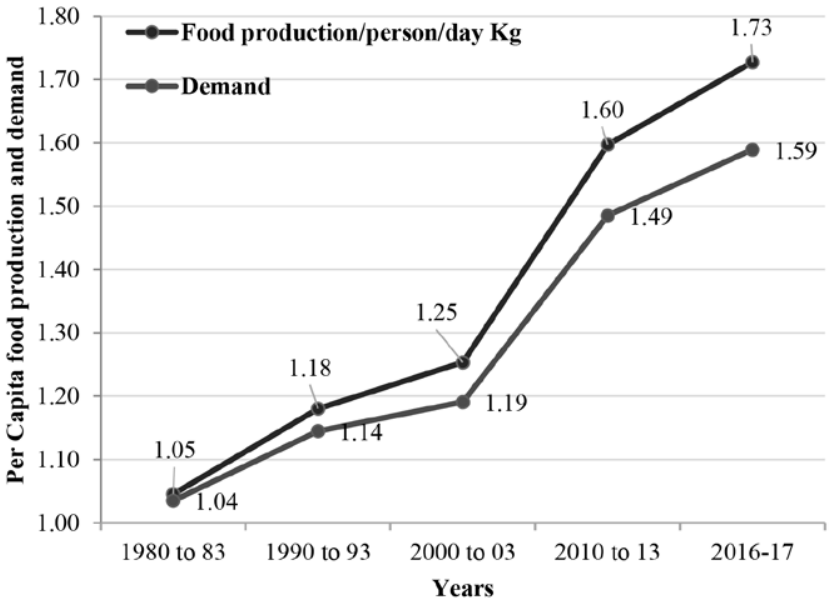

स्रोत : Agricultural Statistics at a Glance, Ministry of Agriculture, GOI.

II. रोजगार सृजन के साथ कार्यकुशलता में वृद्धि

देश में 44.2 प्रतिशत कार्यबल कृषि क्षेत्र में संलग्न है और इस प्रकार अपनी आजीविका के लिए कृषि पर निर्भर है (NSO 2019)। कृषि श्रमिकों और गैर कृषि श्रमिकों की आय के बीच बड़ा अंतर है। यदि कृषि क्षेत्र की वर्तमान परिस्थितियों में बदलाव नहीं लाया गया तो कृषि और गैर-कृषि क्षेत्र के बीच आय के अंतर को कम नहीं किया जा सकेगा एवं उक्त ग्रामीण संकट को भी समाप्त नहीं किया जा सकेगा।

हाल के अध्ययनों से यह पता चलता है कि देश में आर्थिक विकास के साथ-साथ राष्ट्रीय आय और कुल रोजगार में कृषि की हिस्सेदारी घट रही है। इससे उत्पादन और रोजगार के बीच गंभीर संरचनात्मक असंतुलन पैदा हो गया है। इसका मुख्य कारण भारत में कृषि क्षेत्र में गैर-कृषि क्षेत्र से श्रम-शक्ति को आकर्षित करने में रही विफलता है । स्वचालन, एआई, बिग डेटा, आईओटी जैसी प्रौद्योगिकी में हालिया विकास, मशीन लर्निंग इत्यादि ने कृषि से कार्यबल को आकर्षित करने की गैर-कृषि क्षेत्र की क्षमता को और सीमित किया है।

रोज़गार और श्रम पर क्रमिक सर्वेक्षणों में 2004-05 से ग्रामीण और कृषि कार्यबल में महत्वपूर्ण बदलाव का पता चलता है जिनका कृषि और अर्थव्यवस्था पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। कृषि क्षेत्र से बड़े पैमाने पर महिला श्रमिकों की निकासी हो रही है जोकि निम्न सारणी से स्पष्ट है।

सारणी सं.-1: ग्रामीण भारत में खेतिहर एवं कृषि श्रमिकों में बदलाव

वर्ष	खेतिहर			कृषि श्रमिक			कृषि कार्य-बल		
	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला	कुल	पुरुष	महिला	कुल
1993-94	85	53	138	54	37	91	139	90	229
2004-05	93	67	160	53	37	89	146	103	249
2011-12	91	49	140	48	27	75	139	76	215
2017-18	102	37	138	30	20	50	131	56	188

स्रोत :

1. NSSO Survey on Employment and Unemployment 1993-94, 2004-05, and 2011-12.
2. NSO Periodic Labour Force Survey, 2017-18.
3. Population Census of India and projected population.

युवाओं का कृषि क्षेत्र से गैर कृषि क्षेत्र की ओर स्थानांतरण भी ग्रामीण अर्थव्यवस्था की एक विकट समस्या के रूप में उभर रहा है। इसका एक महत्वपूर्ण कारण मध्यम आय वाली नौकरियों के प्रति ग्रामीण युवाओं का बढ़ता रुझान है। लेकिन कई मामलों में ऐसा देखा गया है इन ग्रामीण युवाओं में ऐसी नौकरियों के लिए आवश्यक कौशल और क्षमता नहीं है। ऐसी स्थिति में लघु, सूक्ष्म और मध्यम उद्यम(MSME), जो श्रम गहन हैं, ग्रामीण रोजगार सृजन का उपयुक्त विकल्प प्रतीत होते हैं। कुशल मूल्य श्रृंखला, अनुबंध खेती एवं कारखाने और खेत के बीच प्रत्यक्ष जुड़ाव के माध्यम से कृषि-खाद्य प्रसंस्करण को उत्पादन से जोड़ना ग्रामीण रोजगार सृजन के साथ-साथ किसानों की आय भी बढ़ाने एक कारगर तरीक़ा है। इसके लिए आवश्यक है कि कृषि प्रौद्योगिकी के उन्नयन, कृषि पद्धतियों में आधुनिक कौशल के अनुप्रयोग, खेती में नवाचार और उर्वरक, पानी और अन्य इनपुट उपयोग में बर्बादी को कम करना सुनिश्चित किया जाए। कृषि में कार्य कुशलता में वृद्धि का एक महत्त्वपूर्ण कारक मज़बूत अनुसंधान एवं आधुनिक प्रौद्योगिकी है। अतः कृषि क्षेत्र में घरेलू अनुसंधान एवं विकास के साथ-साथ वैश्विक प्रौद्योगिकी तक किसानों की पहुँच को आसान बनाना आवश्यक है।

III. जलवायु परिवर्तन के साथ अनुकूलन: जल, ऊर्जा और भूमि जैसे महत्वपूर्ण संसाधनों का सतत उपयोग

कृषि गतिविधियों से निकलने वाली ग्रीन हाउस गैसें आम तौर पर दृश्यमान नहीं होती हैं किंतु फसल उत्पादन के लिए मिट्टी में कार्बनिक और अकार्बनिक पदार्थों के अनुप्रयोग, बायोमास और मृत पौधों के अवशेषों का अपघटन, पौधों द्वारा श्वसन, पशुधन पालन, खाद निर्माण और फसल अवशेषों को जलाना इत्यादि इन गैसों के उत्सर्जन के ज़िम्मेदार हैं। भारत में कृषि ग्रीन हाउस गैसों के उत्सर्जन के लगभग 17 प्रतिशत के लिए जिम्मेदार है। इसका तीन-चौथाई हिस्सा चावल की खेती से उत्सर्जित मीथेन एवं पशुधन के कारण है जबकि शेष 26% उर्वरक से उत्सर्जित नाइट्रस ऑक्साइड से आता है।

बाढ़ सिंचाई की सामान्य प्रथा के कारण जल उपयोग दक्षता देश में लगभग 30-35 प्रतिशत है। भारत प्रमुख कृषि प्रधान देशों में उत्पादन में उपयोग किये जाने वाले पानी से 2-3 गुना अधिक पानी का उपयोग करता है । परिणामस्वरूप लगभग सभी क्षेत्रों में भूजल संसाधन ख़त्म होते जा रहे हैं। जल संसाधनों के अधिक दोहन पर रोक लगाने के लिए देश को ऐसा नीतिगत माहौल बनाना चाहिए जो कृषि में प्राकृतिक संसाधनों एवं देश के पारिस्थितिक क्षेत्र के अनुरूप फसलीकरण स्वरूप को बढ़ावा दे। इसके अलावा सिंचाई की आधुनिक विधि (ड्रिप, स्प्रिंकलर,आदि) के माध्यम से कृषि में जल का उपयोग द्वारा सिंचाई की दक्षता में सुधार किए जाने की आवश्यकता है।

आज भारत में कृषि क्षेत्र में उन्नत स्तर पर विज्ञान के अनुप्रयोग, खेती में कौशल, ज्ञान, निवेश और मानव पूंजी में सुधार की आवश्यकता है। कृषि में उच्च तकनीक (ग्रीन हाउस, पॉली हाउस, टिशू कल्चर इत्यादि) के प्रयोग से औसत लागत में कमी आएगी एवं किसानों की आय बढ़ाने में मदद मिलेगी।

उपरोक्त से स्पष्ट है कि कृषि जलवायु परिवर्तन एवं स्वच्छ हवा और भूमि तथा पानी के सतत उपयोग का केंद्र बिंदु है। कृषि जलवायु परिवर्तन और सतत विकास की समस्या और समाधान दोनों का हिस्सा है।

IV. नीतिगत हस्तक्षेप, विनियम और सुधार

भारत में हाल के वर्षों तक खाद्य उत्पादन में वृद्धि ही कृषि-नीति की प्राथमिकता रही है। इस नीति के अंतर्गत कृषि उत्पादन में वृद्धि पर ही ज़ोर दिया गया जबकि होना यह चाहिए था कि किसानों की आय में सुधार एवं उपभोक्ताओं को उचित क़ीमत पर खाद्य-आपूर्ति को मूल उद्देश्य के रूप में रखा जाये। 1990 के दशक के शुरुआती वर्षों में लागू किए गए आर्थिक सुधारों के पश्चात भारतीय अर्थव्यवस्था के अधिकांश क्षेत्रों में हुई प्रगति ने आर्थिक विकास दर को 4.2 प्रतिशत से 7-8 प्रतिशत तक लाने में योगदान दिया। दूसरी ओर कृषि क्षेत्र में विकास दर औसतन 2.9 प्रतिशत रही जबकि इस क्षेत्र का योगदान 1991 तक भारतीय अर्थव्यवस्था में लगभग 40 प्रतिशत तक रहा एवं लगभग 60 प्रतिशत कार्यबल कृषि क्षेत्र में संलग्न रहा। ग़ैर कृषि क्षेत्र में उच्च विकास दर के बावजूद भी किसानों की अल्प संख्या ही ग़ैर कृषि क्षेत्रों में प्रतिस्थापित हो पायी है। परिणामस्वरूप किसानों की औसत आय में नाम मात्र की ही वृद्धि ही है जो कि ग्रामीण- संकट का एक प्रमुख कारण है। 21वीं सदी में अर्थव्यवस्था के सभी क्षेत्रों में बेरोज़गारी की बढ़ती चुनौतियों को देखते हुए किसानों की आय में एक आवश्यक प्राथमिकता बनती जा रही है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु कृषि -उत्पादन में वृद्धि के साथ -साथ कृषि विपणन के बहु- आयामी नीति को अपनाना होगा जिसके अंतर्गत उत्पादकता में वृद्धि, औसत लागत में कमी,कृषि उपज के लिए बेहतर मूल्य- प्राप्ति एवं कृषि आधारित व्यवसायों का विस्तार शामिल है।

आज सबसे गंभीर समस्या कृषि बाजार में कीमतों को लेकर है। एक ओर जहाँ उपभोक्ता ऊँची खुदरा कीमतों की शिकायत करते हैं तो वहीं उत्पादक कृषि उपज की कम कीमतों को लेकर परेशान हैं। उत्पादकों को लाभकारी मूल्य प्रदान करने में बाज़ारों की विफलता अधिक से अधिक उत्पादों के लिए उच्च न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) के भुगतान की बढ़ती मांग में परिलक्षित होती है।

कृषि बाज़ार में कृषि उपज की कीमतें दो प्रकार से बढ़ाई जा सकती हैं:

पहला, न्यूनतम समर्थन मूल्य (MSP) सुनिश्चित करके और दूसरा, प्रतिस्पर्धी बाजार का निर्माण करके । कई राज्यों में किसानों को धान एवं गेहूँ के लिए भी एमएसपी (MSP) से 10-20 फीसदी कम कीमत मिलती है। ऐसे मामलों में एमएसपी सुनिश्चित करने से किसानों की आय 16-32 प्रतिशत बढ़ जाएगी। किसानों को बेहतर मूल्य सुनिश्चित करने का दूसरा और अधिक सूक्ष्म साधन उपभोक्ता कीमतों पर दबाव डाले बिना विपणन प्रणाली में सुधार है। यह प्रणाली और इसका बुनियादी ढांचा पुराना और शोषणकारी है। विकसित होने के बजाय कृषि बाज़ारों का पतन हो गया है और वे किसानों और उपभोक्ताओं के बजाय बिचौलियों हितों की पूर्ति कर रहे हैं। केंद्र सरकार वर्ष 2003 में मॉडल एपीएमसी अधिनियम को अपनाने का प्रस्ताव लेकर आयी थी जिसे राज्यों के परामर्श से तैयार किया गया था। इस अधिनियम का उद्देश्य था- बाज़ारों पर अत्यधिक विनियमन और नियंत्रण को ख़त्म करना, बिक्री एवं खरीद की प्रत्यक्ष सुविधा तथा विक्रेताओं के लिए अधिक विकल्प प्रदान करना, बाजार से स्थानीय व्यापारियों की मिलीभगत को खत्म करना और कृषि बाज़ारों में प्रतिस्पर्धा और निवेश आकर्षित करना। राज्यों द्वारा मॉडल एपीएमसी कानून को पूर्ण रूप से अपनाने और लागू करने में रुचि नहीं दिखाई गयी। परिणामस्वरूप यह अधिनियम महत्वहीन बना रहा।

मॉडल एपीएमसी एक्ट (2003) की प्रगति की समीक्षा के बाद केंद्रीय कृषि मंत्रालय ने अधिक प्रगतिशील और अद्यतन विपणन अधिनियम जिसमें पशुधन भी शामिल है और जिसे मॉडल एपीएलएम अधिनियम (2017) नाम दिया गया है, राज्यों के साथ साझा किया है। राज्यों को इस कानून को अपनाने के लिए राजी किया जा रहा है हालाँकि प्रतिक्रिया बहुत धीमी रही है।

दो अन्य महत्वपूर्ण नियमों को भी आगे बढ़ाया जा रहा है जिनमें मॉडल कृषि भूमि-पट्टा अधिनियम, 2016 एवं मॉडल कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग एक्ट (2018) शामिल हैं। कृषि उत्पादन में कॉर्पोरेट निवेश के लिए एक निवारक के रूप में कार्य करता है। एपीएमसी एक्ट और कॉन्ट्रैक्ट फार्मिंग के प्रावधानों में बदलाव कृषि में निजी क्षेत्र के निवेश को आकर्षित करने में मदद मिलेगी एवं कृषि के लिए सरकारी हस्तक्षेप और समर्थन में भी कमी आएगी।

ऐसे में कृषि क्षेत्र के प्रति संपूर्ण दृष्टिकोण में आमूल-चूल बदलाव की आवश्यकता है। भूमि की पहचान, भूमि मालिकों के पट्टे और अधिकार की रक्षा से किसानों की आय बढ़ाने में मदद मिलेगी। किसानों के एक नए वर्ग के उद्भव, किसानों की आय में पर्याप्त वृद्धि और कृषि में बदलाव, विज्ञान आधारित प्रौद्योगिकी में प्रगति, फसल कटाई से पहले और बाद के दोनों चरणों में निजी क्षेत्र की बढ़ी भूमिका, उदारीकृत उत्पादन बाजार, सक्रिय भूमि पट्टा बाज़ार और दक्षता पर ज़ोर कृषि को 21वीं सदी की चुनौतियों से निपटने में सक्षम बनाएगा और नए भारत के निर्माण के लक्ष्य को प्राप्त करने में सहायक होगा। यह सुनिश्चित करने के लिए केंद्र और राज्य सरकारों के बीच एक अच्छे समन्वय की आवश्यकता है।

संदर्भ-सूची (References)

1. Bajar Sumedha and Ubaid Mushtaq (2019). The processes of Transformation, in NIAS Report.

2.Chand Ramesh (2012). Development Policies and Agricultural Markets, Economic and Political Weekly, Review of Rural Affairs, V.47.

3.Chand Ramesh (2014). From Slowdown to Fast Track: Indian Agriculture since 1995, National Centre for Agricultural Economics and Policy Research, New Delhi, Working paper 1/2014.

4.Chand Ramesh (2019). Innovative Policy Interventions for Transformation of Agriculture Sector, Agricultural Economics Research Review, 32(1).

5.Chand Ramesh, Raka Saxena and Simmi Rana (2015). Estimates and Analysis of Farm Income in India, 1983–84 to 2011–12, Economic & Political Weekly, 50(22).

6.Chand Ramesh, Shivendra Srivastava and Jaspal Singh (2017). Changes in Rural Economy of India, 1971 to 2012: Lessons for Job-led Growth, Economic and Political Weekly, 53(52).

7.National Statistical Office (2019). Periodic Labour Force Survey: July 2017-June 2018, Ministry of Statistics and Programme Implementation, GOI.